International Literary Quest

An International Multidisciplinary Peer Reviewed Refereed Research Journal

E-mail : internationalliteraryquest@gmail.com
website : www.internationalliteraryquest.com

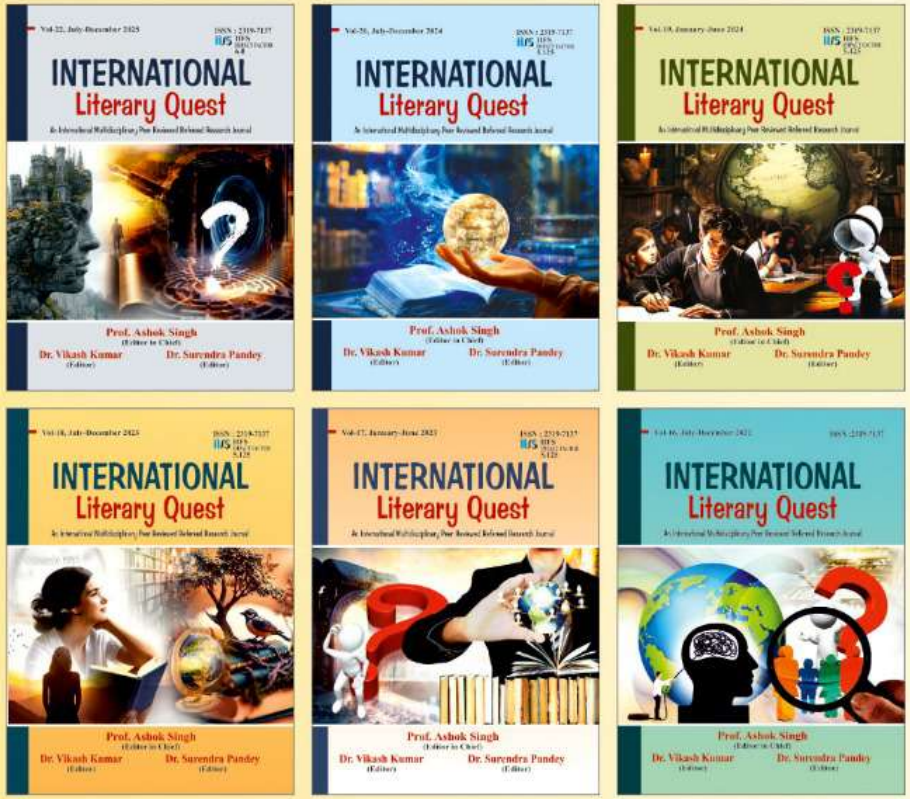

Published By : Akhand Publishing House, Delhi (India)
L-9/A, First Floor, Street No.42, Sadatpur Extension, Delhi
Email: akhandpublishing@yahoo.com

INTERNATIONAL Literary Quest Vol-22, July-December 2025

Vol-22, July-December 2025

ISSN : 2319-7137
IIFS IMPACT FACTOR 6.0

INTERNATIONAL Literary Quest

An International Multidisciplinary Peer Reviewed Refereed Research Journal

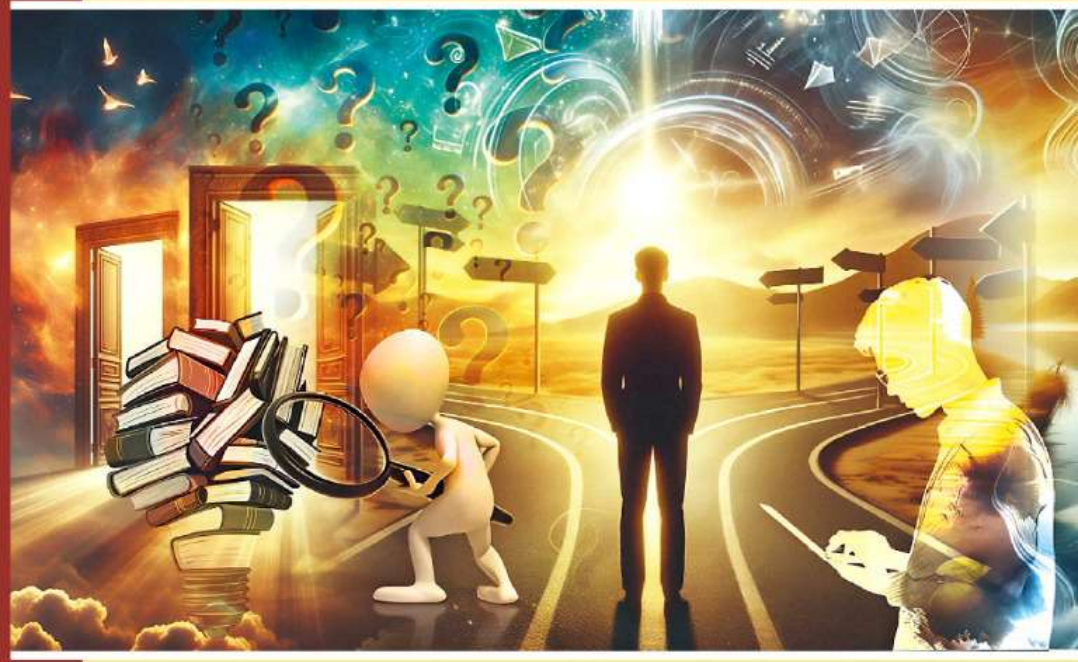

Prof. Ashok Singh
(Editor in Chief)

Dr. Vikash Kumar
(Editor)

Dr. Surendra Pandey
(Editor)

Vol. 22 July–December 2025 ISSN: 2319-7137 IIFS Impact Factor: 6.0

INTERNATIONAL LITERARY QUEST

[An International Multidisciplinary Peer Reviewed Refereed Research Journal]

Chief Editor
Prof. Ashok Singh

Editors
Dr. Vikash Kumar
Dr. Surendra Pandey

Published by
Akhand Publishing House, Delhi (India)
L-9/A, First Floor, Street No.42, Sadatpur Extension, Delhi
Mob. 9968628081, Email: akhandpublishing@yahoo.com

Peer Reviw Policy :

This journal follows single blind peer review policy. Each paper is evaluated by two refrees. The responsibility of the facts given and opinions expressed in articles of journal is solely that of individual author and not to the publisher.

Publication Date : 31 December 2025

Email:internationalliteraryquest@gmail.com
Website:https://internationalliteraryquest.com/

Mob. 9470828492, 9451173404

Chief Editor

Prof. Ashok Singh
Ex-Vice Chancellor, Sant Gahira Guru Vishwavidyalaya, Sarguja, Ambikapur, Chhattisgarh

Editor

Dr. Vikash Kumar
Assistant Professor, Department of Hindi, Shri Varshney College, Aligarh, U.P

Dr. Surendra Pandey
Assistant Professor, Department of Hindi, Kooba P.G. College, Dariapur, Newada, Azamgarh

Deputy Editor

Dr Santosh Bahadur Singh
Assistant Professor
Department of English
Lady Irwin College, University of Delhi

Dr Ramesh Kumar
Assistant Professor
Department of Hindi, Guest Faculty
University of Delhi

Executive Editor

Dr Arun Kumar Mishra
Assistant Professor, Department of Hindi, Munishwar Dutt Snatkottar Mahavidyalaya, Pratapgarh, Uttar Pradesh

Dr Mohammad Aadil
Assistant Professor, Department of History, Bhavan's Mehta P. G. College, Kaushambi, Uttar Pradesh

Dr. Vivekanand Tiwari
HOD/Assistant Professor
Department of Hindi
Gopeshwar College, Hathwa
Gopalganj, Bihar

Sub Editor

Dr Varsha Singh
Associate Professor, Department of English, Deshbandhu College, University of Delhi

Dr Atul Arora
Assistant Professor
Department of Law, Shri Varshney College
Aligarh

Managing Editor

Dr Rakesh Kumar Ranjan
Assistant Professor, Department of Hindi
Magadh University Bodhgaya,
Gaya, Bihar

विषय-सूची
Contents

PART–I

1. पंचायती राज में महिला प्रतिनिधियों की सक्रियता और प्रभावशीलता: एक समाजशास्त्रीय अध्ययन 3
—गीता कुमारी

2. अघोर चेतना की यात्रा: परंपरा, दर्शन और बाबा अवधूत राम का योगदान 9
—आशुतोष कुमार सिंह, मो० मोशर्रफ हुसैन

3. भारतीय गद्य साहित्य: बीसवीं सदी 15
—सुहानी शुभम

4. फणीश्वर नाथरेणु के कथा साहित्य में ग्रामीण और सामाजिक चेतना 18
—डॉ. धीरेन्द्र कुमार श्रीवास्तव

5. जातीय जनगणना और पहचानकी राजनीति: भारतीय बहुलतावादी समाज में चुनौतियाँ 24
—जय प्रकाश मिश्रा

6. भारत के एकीकरण में सरदार पटेल की अतुलनीय भूमिका 32
—डॉ. सत्यबहादुर सिंह

7. समकालीन हिन्दी कहानी और प्रमुख कथाकार 39
—डॉ. विवेकानंद तिवारी

8. 'हानूश': सत्ताऔर कला का द्वंद्व 53
—डॉ. मुनिल कुमार वर्मा

9. ग्रामीण और शहरी क्षेत्र के प्रारम्भिक स्तरीय मातृ-पितृ विहीन बालक-बालिकाओं के व्यक्तित्व का अध्ययन 59
—डॉ. जीतेंद्र प्रताप, लवलेश कुमार विश्वकर्मा

10. नया काव्यशास्त्र: एक आलोचनात्मक अवलोकन 68
—निकिता कुमारी

11. प्राचीन भारत में शिल्पवृत्ति 72
—डॉ. रजनीकान्तराय

12. आचार्य चाणक्य की संचार नीति: हाइब्रिड वॉरफेयर के सन्दर्भ में एक अध्ययन 77
—डॉ. रविंद्र सिंह, अजय कुमार

13. कथाकार शिवप्रसाद सिंह: सत्ता, समाज और राजनीति 86
—डॉ. अमित कुमार सिंह

14. "हिंदी के मनोवैज्ञानिक कथा साहित्य में नारी चित्रण" 90
—सोनिया देवी

15. गांधीवादी विचारधारा के मूल्यों का पर्यावरण संरक्षण में महत्व 96
—अंजू कुशवाहा

16. आदर्श कारागार अधिनियम 2023 का वर्तमान परिदृश्य के आधार पर एक विश्लेषण 102
—श्रीमती नैपाली

17. संस्कृत-साहित्यिक ग्रन्थों के संपादक आचार्य सीताराम चतुर्वेदी 113
—हर्षित उपाध्याय

18. हिन्दी गद्य और भारतेन्दु हरिश्चन्द्र 117
—डॉ. अरुण कुमार मिश्र

19. शिवप्रसाद सिंह के कथा-साहित्य में आंचलिकता एवं यथार्थ-बोध 124
—वीरेन्द्र पाल, प्रो. मीरा कश्यप

20. गौतम बुद्ध के प्रतिनिधि प्रतीक 132
—अवधेश कुमार चौरसिया

21. बिहार में माध्यमिक विद्यालयों में गुणवत्तापूर्ण शिक्षा की वर्तमान स्थिति का समीक्षात्मक अध्ययन 137
—राकेश कुमार, डॉ. परमानन्द त्रिपाठी

22. हिंदी सिनेमा में दलित चित्रण 142
—डॉ. भावना शाक्य

23. ऋता शुक्ल की कहानियों का सामाजिक-सांस्कृतिक एवं दार्शनिक अध्ययन 147
—डॉ. पूनम कुमारी

24. छत्तीसगढ़ में धार्मिक पर्यटन की संभावनाएं और चुनौतियां 151
—दलगंजन सिंह महिलांग, डॉ मंजू साहू

25. जैन साहित्य में परिवार विमर्श 163
—प्रो.(डॉ) अजित कुमार जैन

26. निराला का साहित्यिक वैविध्य 168
—डॉ. कमलेश कुमार मौर्य

27. स्वातंत्र्योत्तर काल (1950–1975) के आंचलिक हिन्दी उपन्यासों
में ग्रामीण समाज की संरचना एवं सामाजिक परिवर्तन का अध्ययन 175
—असित कुमार मिश्र

28. स्त्री विमर्श और मीरा का पद 181
—डॉ. विकास कुमार

29. बिहार की मलिन बस्तियों के बच्चों की सामाजिक एवं शैक्षणिक समस्याओं का समाजशास्त्रीय अध्ययन
(भागलपुर जिला के संदर्भ में) 185
—कुमारी नीतू

30. शिक्षाशास्त्री के रूप में डॉ. श्यामाप्रसाद मुकर्जी 190
—डॉ. सीमा सिंह

31. ई-कॉमर्स के उभरते रुझान और उपभोक्ता व्यवहार में परिवर्तन का विश्लेषण 196
—जितेंद्र कौशिक

32. हिंदी पत्रकारिता के विकास में पत्र -पत्रिकाओं का अवदान 203
—डॉ. हर्षवर्धन पान्डे

33. भारतीय शेयर बाजार में निवेशकों का व्यवहार:
जोखिम एवं लाभ का अध्ययन 214
—जितेंद्र कौशिक

शिवप्रसाद सिंह के कथा-साहित्य में आंचलिकता एवं यथार्थ-बोध

वीरेन्द्र पाल
शोधार्थी, के0जी0के0 (पी0जी0) कॉलेज, मुरादाबाद
प्रो0 मीरा कश्यप
शोध निर्देशिका, विभागाध्यक्ष, हिन्दी, के0जी0के0 (पी0जी0) कॉलेज, मुरादाबाद

हिन्दी कहानी में आंचलिकता का संदर्भ नयी कहानी आंदोलन से अपनी रचनात्मक पृथकता को चिन्हित करता है। साथ ही वह नयी कहानी आंदोलन की एक अन्तर्गतधारा होते हुए उन युगीन संदर्भों, स्थितियो, परिवर्तनों, मूल्यों और मान्यताओं को भी उजागर करता है, जो नयी कहानी के साथ आरम्भ से ही जुड़े हुए थे। इस प्रकार हिन्दी के आंचलिक संदर्भ को एक व्यापक परिप्रेक्ष्य में समझने की चेष्टा प्रस्तुत अध्ययन का लक्ष्य रहा है। विविध पक्षों के पृथक-पृथक विवेचन-विश्लेषण के पश्चात् एक पुनरावलोकन की आवश्यकता है, जिससे आंचलिकता की पृष्ठभूमि, अवधारणा, कथ्य और शिल्प की नवीनता, मूल्य चेतना और अंतर्निहित समस्याओं के स्वरूप को सपष्ट रूप में समझा जा सकता है।

शिवप्रसाद सिंह ऐसे कहानीकार हैं, जिन्होंने प्रेमचन्द की परम्परा को पुनर्जीवित करते हुए उसे आधुनिक दृष्टि प्रदान की। उन्होंने ग्राम्यांचल के माध्यम से भारतीयता की पहचान बनाये रखने में अपूर्व योगदान दिया। इसके लिए उन्होंने आंचलिकता के साथ-साथ प्रतीकात्मकता का भी आश्रय लिया है। शिवप्रसाद सिंह ने परिवार के अन्तर्वैयक्तिक सम्बंधों को बारीकी से परखा है। उन्होंने दादा-दादी, बाबा, भाई के माध्यम से ध्वस्त होते हुए मूल्यों को देखा। पारिवारिक सम्बंधों की जटिलता का सूक्ष्मपरक अंकन 'दादी माँ' कहानी में परिलक्षित होता है। यही नहीं उन्होंने अपनी कहानियों के माध्यम से टूटे और बिखरे हुए जीवन मूल्यों को स्थापित करने का प्रयास किया। मानवीय मूल्य की स्थापना के कारण जिन्दगी के तत्व पुर्नजीवित हो उठे।

शिवप्रसाद सिंह की पहली कहानी 'दादी माँ' जो 1951 में 'प्रतीक' में प्रकाशित हुई। पहली आंचलिक रचना के रूप में विख्यात है। इनके प्रमुख कहानी संग्रह निम्नलिखित है। आर-पार की माला, कर्मनाशा की हार, बिन्दा महाराज, मुर्दासराय, भेड़िये, अंधेरा हंसता है, इन्हें भी इन्तजार है। शिवप्रसाद सिंह ने 'रेती', 'नन्हों', 'भग्न प्राचीर' आदि कहानियों के माध्यम से ग्रामीण अंचल में परिव्याप्त कुरीतियों, रीति-रिवाजों के अंधानुकरण का कड़ा विरोध किया। इसी कड़ी में 'कर्मनाशा की हार' नामक कहानी का उल्लेख किया जा सकता है जो कि शिवप्रसाद सिंह की श्रेष्ठ आंचलिक कहानी है। इसमें उन्होंने प्रमाणिक यथार्थ के माध्यम से धार्मिक रूढ़ियों की पर्ते खोल कर रख दी है। 'मुर्दा सराय' में तो उन्होंने मानवीय संत्रास को ही कहानी के केन्द्रीय तत्व के रूप में प्रस्तुत कर दिया है जिसमें जीवन-बोध से पलायन व मृत्युबोध से संवेदित मानवीय जीवन को बारीक स्पन्दन का रेखांकन हुआ है। इनकी कहानियों में चरित्र और कथ्य के सानुपातिक समायोजन पर बल दिया गया है। अपने अस्तित्व को उभारने के लिए विविध क्षेत्रों में विरोधी शक्तियों से जूझते हुए मनुष्य और उसकी जिन्दगी के प्रति लगाव इनकी कहानियों से स्पष्ट होता है।

आंचलिक कहानी अपनी भाषिक संरचना में संकेतिकता लिये हुए है। कहानीकार भाषा प्रयोग में स्पष्ट कथन और अभिधा के प्रयोग के स्थान पर जब शब्दों का व्यंजना पूर्ण प्रयोग करता है। भाषा में सांकेतिकता के साथ आंचलिक

कहानीकारों ने अपनी कहानियों में काव्यात्मक भाषा का प्रचुर प्रयोग किया है। आंचलिक कहानीकारों ने जहाँ प्राकृतिक परिपार्श्व को बिम्बित किया है, वहाँ उनकी भाषा काव्यात्मक भाषा हो गयी है। रेणु, शिवप्रसाद सिंह की कहानियों में काव्यात्मक भाषा प्रयुक्त है। आंचलिक कहानीकारों ने अपनी कहानियों के द्वारा यदि कहीं अंचल विशेष के संस्कार के अनुरूप शब्दों का प्रयोग किया तो कहीं-कहीं कहानीकार ने हिन्दी के तत्सम शब्दों को अंचल विशेष के अनुरूप ध्वनि प्रदान कर उसे देशज रूप में प्रस्तुत कर उसे आंचलिक रूप प्रदान किया तथा भाषा में आंचलिकता का समावेश किया है तथा विशुद्ध आचंलिक शब्दों का प्रयोग अनेक कहानीकारों ने किया है। भाषा में लोकोक्तियों और मुहावरों के प्रयोग से ग्रामीण जीवन की सहज अभिव्यक्ति होती है। इसके माध्यम से ग्रामीण व्यक्ति अपनेकथन को अधिक प्रभावशाली ढंग से आंचलिक विशिष्टता प्रदान करता है। पात्रों की स्थितियों तथा परिवेश को मुहावरों और लोकोक्तियों के प्रयोग से अधिक स्पष्ट रूप से उभारा जा सकता है।

शिवप्रसाद सिंह "सपेरा" कहानी में अर्थाभाव के कारण तनावग्रस्त व्यक्ति की विद्रोहात्मक स्थिति का चित्रण है। अमरकान्त की "दोपहर भोजन" कहानी में अर्थाभाव से ग्रस्त परिवार की अभावग्रस्त स्थिति का जीवंत चित्र उभारा गया है। मध्यवर्गीय जीवन की अभाव ग्रस्तता और तद्जन्य संवेदनाओं और विसंगतियों का चित्रण मोहन राकेश की 'मिस्टर भाटिया' में देखी जा सकती है। निर्मल वर्मा की लन्दन की एक रात', सितम्बर की एक शाम तथा 'माया का मर्म' कहानी में बेरोजगारी की विषम स्थिति से उबे युवकों की विक्षिप्तता अंकित है।

बीसवीं शताब्दी के ठीक मध्य से (1950-51) हिन्दी कहानी में एक परिवर्तन दिखायी पड़ता है। कहानी के इस परिवर्तित स्वरूप ने नवीन जीवन दृष्टि नया आधुनिक बोध एवं नये शिल्प के कारणवश सबका ध्यान अपनी ओर आकृष्ट किया। कहानी की इस नयी प्रवृत्तियों को लक्ष्य बनाकर उसे 'नयी कविता' के आधार पर 'नयी कहानी' कहा जाने लगा। नयी कहानी का आरम्भ हिन्दी में ग्राम जीवन अथवा भारतीय कृषक जीवन को लेकर लिखी गयी ग्राम कथाओं से होता है और इस सिलसिले में शिवप्रसाद जी की कहानी का उल्लेख किया जाता है। जो 1951 में प्रथम बार प्रकाशित हुई। प्रेमचन्द की परम्परा को पुनर्जीवित करके उसे आधुनिक 'मान' देने वाले कथाकारों में शिवप्रसाद सिंह अग्रणी थे। अपनी प्रथम कहानी 'दादी माँ' को लेकर उनका कथन है- 'दादी माँ' ग्राम जीवन की पहली कहानी थी जिसमें निजी अनुभव और भोगे हुए सत्य की व्यथा को व्यक्त किया गया था। इसी धरातल पर उन्होंने अपनी और प्रेमचन्द की कहानियों के बीच विभाजक रेखा खीची। डा0 बच्चन सिंह ने इसके साम्य वैषम्यमूलक दुहरे कथा शिल्प के आधार पर शिव प्रसाद सिंह को इमारती आदमी कहा था। अपनी इस प्रारम्भिक कहानियों से भी शिवप्रसाद सिंह एक कहानीकार के रूप में बहुचर्चित और बहुप्रशंसित हो उठे। यहाँ इनकी कथा यात्रा के क्रमिक विकास पर एक विहंगम दृष्टि डाल लेना आवश्यक है- इनका सन् 51 से 53 तक की प्रारम्भिक कहानियों का संग्रह 'आर पार की माला' नाम से जून 1955 में काशी से प्रकाशित हुआ। इसमें जिन कहानियों का संग्रह हुआ है वे इस प्रकार है- 1. नयी पुरानी तस्वीरे 2. बरगद का पेड़ 3. हीरो की खोज 4. महुवे का फूल 5. दादी माँ 6. देऊ दादा 7. मंजिल और मौत 8. मास्टर सुख लाल 9. कबूतरों का अड्डा 10. उस दिन तारीख थी 11. पोषाक की आत्मा 12. चितकबरी 13. उसकी भी चिट्ठी आयी थी 14. मुर्गे ने बाग दी 15. उपाइन मैया 16. आर-पार की माला।

डॉ0 शिवप्रसाद सिंह की कहानियों का दूसरा संग्रह कर्मनाशा की हार 1958 में प्रकाशित हुआ। इसमें 16 कहानियाँ संग्रहित है जो निम्नलिखित है- 1. कर्मनाशा की हार, 2. प्रायश्चित, 3. पापजीवी, 4. केवड़े का फूल, 5. बिन्दा महाराज, 6. कहानियों की कहानी, 7. वशीकरण, 8. उपहार, 9. सँपेरा, 10. भग्न प्राचीर, 11. शहीद दिवस, 12. हाथ का दाग, 13. माटी की औलाद, 14. गंगा तुलसी, 15. बिना दीवारों का घर, 16. रेती।

इस कहानी संग्रह में कहानीकार की कहानी यात्रा के विकास क्रम को स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। इन कहानियों में एक ओर जहाँ वस्तु-भाव की नवीनता है वही शैली में नया सौन्दर्य और अर्थपूर्ण कलाकारिता के दर्शन होते हैं। इस कहानी संग्रह में लेखक समाज के अनदेखे, अस्वस्थ और उपेक्षित अंग को कला की कलम से छूकर पनपने देता है। मुसहर, बिन्दा महाराज, हिजड़ा गुलाबी, मजूरिन वशीर, सँपेरा, टीगल कुम्हार आदि जिन्दा पात्र उछल कर ऊपर आ जाते हैं।

शिवप्रसाद सिंह का तीसरी कहानी संग्रह भी 'इन्हें भी इंतजार है' 1961 में प्रकाशित हुआ। इसमें 20 कहानियाँ निम्नलिखित है- 1. नन्हों, 2. बेहया, 3. मरहला, 4. इन्हें भी इंतजार है, 5. टूटे तारे, 6. सुबह के बादल, 7. आखिरी बात, 8. बहाववृत्ति, 9. उधूल और हसी, 10. शाखा मृग, 11. परकटी तितली, 12, पैटमैन, 13. टूटे शीशे की दीवार, 14. खैरा पीपल कभी न डोले, 15. कर्ज, 16. अन्ध कूप, 17. धतूरे न डोले, 18. आँखे, 19. बीच की दीवार।

इस संग्रह की सभी कहानियाँ लगभग राजनैतिक, सामाजिक परिवेश की उपज है जिसमें कर्मनाशा की हार संग्रह की कहानियाँ लिखी गयी। इस संग्रह की कहानियाँ शिल्प की अभिनवता और मनोवैज्ञानिक चित्रण की दृष्टि से पहले लिखी गयी कहानियों से अधिक सशक्त, प्रौढ़ और मार्मिक है। इसमें ग्राम कथानक शिल्प की अन्तररसता और प्रजातांत्रिक दीप्ति है।

डॉ0 शिवप्रसाद सिंह का चौथा कहानी संग्रह मुरदा सराय सन् 1966 में भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन द्वारा प्रकाशित हुआ। इसमें कुल 12 कहानियाँ हैं- 1. ताड़ी का पुल, 2. अरून्धती, 3. मैं कल्याण और जहाँगीरनामा, 4. प्लास्टिक का गुलाब, 5. किसकी आँखे, 6. धारा, 7. चेन, 8. अंधेरा हँसता है, 9. जंजीर फायर ब्रिगेड और इंसान, 10. यात्रा सतह के नीचे, 11. मुरदा सराय, 12. तबाकी।

इस कहानी संग्रह में आधुनिकता-बोध का सम्यक् विस्फोट हुआ है और विक्षोभ, तीखापन, तनाव और कड़वाहट चरम सीमा तक पहुँच गयी है। संग्रह की भूमिका- 'कुछ न होने का कुछ' में कहानीकार ने अपनी रचना प्रक्रिया को स्पष्ट करने का प्रयास किया है, जिसका महत्व संकलन की कहानियों में किसी माने में कम नहीं है। 'ताड़ीघाट का पुल' तथा 'अरून्धती' शीर्षक प्रारम्भिक कहानियों में समाज और इकाई के बीच का संघर्ष उभारा गया है। इस संग्रह की शीर्षक कथा 'मुरदा सराय' में केन्द्रीय तत्व संत्रास है। इसमें जीवन-बोध बनाम मृत्युबोध संवेदित है। इस कहानी में जीवन का प्रतीक घर है और मृत्यु का प्रतीक श्मशान है। 'मुरदा सराय' दोनों के बीच में है, जहाँ वीभत्स भयानक सृष्टि के साथ संवेदनीय सूक्ष्म श्रृंगार स्थिति का सामंजस्य कथाकार की एक अतिरिक्त उपलब्धि है।

यह तथ्य ध्यान देने योग्य है, कि कथा साहित्य में आंचलिकता का संदर्भ उपन्यासों के माध्यम से अधिक चर्चित रहा है। इसीलिए पाठकों की दृष्टि आंचलिक उपन्यासों की ओर विशेष रूप से की गयी। वास्तविकता यह है कि आंचलिक उपन्यास की अपेक्षा आंचलिक कहानी पहले अस्तित्व में आयी। डा0 शिवप्रसाद सिंह की कहानी 'दादी माँ' जो सन् 50 में प्रतीक के जनवरी अंक में प्रकाशित हुई-पहली आंचलिक रचना कही जा सकती है। इस दृष्टि से आंचलिक कहानी पिछले 40 वर्ष के रचना काल में रचनात्मक शक्ति, स्फूर्ति और प्रौढ़ता का परिचय देती रही। यद्यपि आज आंचलिक कहानी का वेग नहीं रहा और नहीं रहा और न वह स्फूर्ति और ताजगी रही तथापि समय-समय पर कहानीकार दूरवर्ती अंचलों में स्थिति जीवन सत्य को आधार बनाकर आंचलिक कहानीकार पंकज बिष्ट तक कहानियों को अध्ययन के दायरे में लिया गया है।

वास्तव में देखा जाय तो आंचलिक संदर्भों की ओर रचनाकारों का ध्यान आकर्षित करने का श्रेय उन विचारकों, लेखकों और पत्रकारों को जाता है जो कि स्वदेशी आन्दोलन से प्रभावित और प्रेरित होकर इन विचारकों को यह बात बहुत अखरी कि भारतीय जन-जीवन के सबसे बड़ा भाग ग्रामीण जनता के रहन-सहन एवं लोक जीवन की ओर हमारे

कथाकारों का ध्यान गया और ग्रामीण जीवन की आभा को कथा साहित्य द्वारा वर्णित किया गया। जिसके अन्तर्गत अंचल विशेष को लेकर लिखी गयी आंचलिक कहानियों के विविध आयामों को समग्र दृष्टि से सिंहावलोकन करने के पश्चात् स्पष्ट परिलक्षित होता है कि यद्यपि अंचल-विशेष को आधार बनाकर कहानी लिखने की परम्परा पहले भी विद्यमान रही है। परन्तु सन् 1950 ई0 के बाद ही इसे व्यवस्थित रूप से प्राप्त हुआ है। स्वतंत्रता की प्राप्ति के बाद इस क्षेत्र में उल्लेखनीय कार्य हुए जिसके फलस्वरूप हिन्दी कथा क्षेत्र का न केवल दायरा बढ़ा अपितु इसे एक विस्तृत भाव-भूमि भी मिली। आंचलिक कथाकारों ने किसी विशिष्ट अंचल की खास परम्पराओं, रहन-सहन तथा वातावरण का इस प्रकार नवीन ढंग से चित्रित करने का प्रयास किया गया है जो अत्यन्त सराहनीय सिद्ध हुआ। यह कहना अतिश्योकित न होगी कि इन कथाकारों ने अंचल के कोने-कोने को अपनी कथा के माध्यम से सहज ही जीवन्त रूप में उपस्थित कर दिया, जब कि उस अंचल में निवास करने वाले निवास करने वाले लोग इन विभिन्न पहलुओं से सर्वथा नहीं तो कुछ हद तक तो अनभिज्ञ रहे ही होंगे। इस प्रकार अनछुए पहलू से साक्षात्कार करने में इन आंचलिक कथाकारों का विशेष योगदान रहा है।

आंचलिक कहानी के माध्यम से रचनाकारों ने लोक-जीवन की गहराई में झांक कर अपनी संस्कृतिक अस्मिता को उभारने की चेष्टा की। औद्योगीकरण, शहरीकरण और पाश्चात्य प्रभावों से आक्रान्त शहरी समाज से दूर ठेठ भारतीयता के दर्शन अब भी ग्रामीण अंचलों में होता है। इस भारतीयता के प्रति तीव्र ललक हिन्दी आंचलिक कहानी में स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है। हिन्दी कथा साहित्य के अन्तर्गत आंचलिकता का नवीन प्रयास नहीं हुआ अपितु पाश्चात्य साहित्य जगत में भी इसके कुछ बीज दिखाई पड़ते हैं। उन्नीसवीं सदी के प्रारम्भ में यह परिपाटी पाश्चात्य साहित्य में देखने को मिल जाती है। इन पाश्चात्य कथाकारों में मेरिया एजबर्थ, मार्क टे्वन, हेल्कवरी फिनकी, सरवाल्टर स्कार्ट, थामस, हार्डी आदि के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इन्होंने व्यक्ति के जीवन के साथ स्थानीय चित्रण, रहन-सहन, बोलचाल तथा स्थानीय प्रकृति चित्रण को भी अपनी कथा में सम्मिलित किया। परन्तु उनका यह सराहनीय योगदान उपन्यास के क्षेत्र से सम्बंधित रहा। इन सभी से इतर हार्डी ने कथा साहित्य में अंचल के प्राकृतिक स्वाभाविक एवं यथार्थवादी चित्रण द्वारा लोगों का ध्यान अपनी ओर सहज ही खींच लिया।

स्पष्ट है कि जहाँ भारतीय साहित्य में प्रेमचन्दोत्तर युग से आंचलिक प्रवृत्तियाँ व्यवस्थित रूप में दृष्टिगोचर होती है, वही पाश्चात्य साहित्य में आंचलिक प्रवृत्तियाँ उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ से ही विद्यमान थी। परन्तु दोनों में एक बात की समानता अवश्य रही वह यह है कि भारतीय साहित्य एवं पाश्चात्य साहित्य दोनों में ही आंचलिकता की प्रवृत्ति सर्वप्रथम उपन्यास विद्या में दृष्टिगत हुई, तदुपरान्त कथा साहित्य में अवतरित हुई और एक बार जब यह धारा कथा क्षेत्र में बहनी शुरू हुई कि आज तक सतत् रूप से प्रवाहमान बनी हुई है।

आंचलिकता की ओर मुड़ने का एक महत्वपूर्ण परिणाम यह रहा कि कहानीकार जनजीवन से अधिक निकट सम्पर्क में आ गया। इन कहानीकारों ने अंचल की परम्पराओं, लोक पर्वों, धार्मिक विश्वासों एवं आडम्बरों तथा उनकी सामाजिक व आर्थिक परिस्थितियों को गहराई से अनुभव किया, साथ ही साथ विभिन्न समस्याओं की ओर उनका ध्यान गया। इन सभी को आधार रूप में ग्रहण कर उन्होंने अपनी लेखनी का विषय बनाया। जिससे जन-मानस का ध्यान बरबस ही खींचता चला गया। लोक जीवन इन समस्याओं से जूझता हुआ किस प्रकार अपने भविष्य की ओर गतिशील है, इसका चित्र ये रचनाएं प्रस्तुत करती है।

'हिन्दी कहानी में स्थानीय रंग और आंचलिकता का पहर' में सर्वप्रथम आंचलिकता और स्थानीय रंग में विभेद का स्पष्टीकरण किया गया है। वास्तव में आंचलिकता के अन्तर्गत किसी विशेष अंचल के सम्पूर्ण परिवेश, सांस्कृतिक

विशेषताओं का यथार्थपरक चित्रण प्राप्त होता है परन्तु स्थानीय रंग कथा की संरचना का बाह्य तत्व होता है। किसी रचना में जब उसके कथ्य की स्थानीय विशेषताओं को प्राकृतिक, भौगोलिक, सामाजिक वातावरण के संस्पर्श के साथ प्रस्तुत किया जाता है तो वहाँ आंचलिकता न होकर स्थानीय रंग ही प्रधान होता है जो कि ग्रामीण कहानी के साथ-साथ नगरीय कहानी में भी दृष्टिगत होती है।

ज्ञातव्य है कि स्थानीय रंग का सर्वप्रथम पाश्चात्य साहित्यकारों के अन्तर्गत मार्क टेव्वन ने किया है। आगे चलकर हार्डी के कथा साहित्य में पहाड़ों तथा मैदानों के वर्णन में इन स्थानीय रंगों को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया। भारतीय कथा साहित्य की तरफ यदि रूख करें तो हम प्रेमचन्द, निराला तथा प्रसाद की कहानियों में स्थानीय रंग की उपस्थिति को अनुभव कर सकते हैं। इन्होंने स्थानीय रंग को कथा के मुख्य उद्देश्य को सजीव और सप्राण बनाने के सशक्त साधन के तौर पर इस्तेमाल किया। स्थानीय रंग आंचलिकता के समकक्ष न होकर उसके वैविध्य को व्यक्त करने में एक सहायक उपादान मात्र है।

स्थानीय रंग प्रधान कहानीकार अपने कहानी को उपयुक्त बनाने के लिए आंचलिक तत्वों का समावेश तो करते हैं पर कथा तथा आंचलिक तत्व दोनों पृथक-पृथक दृष्टिगोचर होते हैं, पर आंचलिक सृष्टा गतिशील कथा में आंचलिक सर्वेक्षणों का ऐसा सन्निपात करता है कि वे विभक्त नहीं किये जा सकते।

आंचलिक कहानीकार अंचल की समग्र सांस्कृतिक चेतना की अभिव्यक्ति के लिए इन सबका प्रयोग पर्याप्त मात्रा में करता है जो स्थानीय रंग मात्र देने वाली कृतियाँ क्षेत्रीय विशेषता की और उन्मुख होती हैं। फलतः अपनी इन निजी विशेषताओं के कारण अंचल अन्य अंचलों में सर्वथा पृथक रूप से उद्भाषित हो उठता है। आंचलिक कहानीकारों ने अंचल विशेष के जीवन को समग्र रूप से चित्रित करने के लिए स्थानीय रंग को विशेष रूप से उभारा है। रेणु ने बिहार अंचल पर आधारित कहानियों में उस प्रदेश की स्थानीय विशेषताओं का वर्णन किया है। इसी प्रकार शिवप्रसाद सिंह की कहानियों में उत्तर-प्रदेश के पूर्वी गाँवों, शैलेश मटियानी, शेखर जोशी, हिमांशु जोशी में कुमायूँ संस्कृति तथा राजेन्द्र अवस्थी एवं शानी की कहानियों जनजातियों की स्थानीय रंग का प्रयोग हुआ है।

सन् 1950 के बाद नई कहानी आंदोलन के शुरूआत के साथ हिन्दी कहानी कई दिशाओं में फैलती है और कई कोटियों में विभाजित होती है। तत्वों के आधार पर देखा जाय तो आंचलिकता के कमोवेश तत्व चन्द्रधर शर्मा गुलेरी से लेकर प्रेमचन्द तक की कहानियों में ढूंढे जा सकते हैं किन्तु आंचलिकता की वास्तविक तस्वीर रेणु की कहानियों में मिलती है। शिवप्रसाद सिंह उसी घेरे में आते हैं। मार्कण्डेय की चर्चा के बिना आंचलिकता के प्रहर की चर्चा अधूरी रहेगी। थोड़ा आगे बढ़ने पर प्रेमचन्द और रेणु की टूटी हुई कड़ियों को जोड़ने के माध्यम काम मिथिलेश्वर अपने कहानियों में करते हैं।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात ग्रामीण और शहरी जीवन में सर्वत्र मोहभंग की स्थिति उभरी। नयी चेतना, शिक्षा का विकास, तकनीकीकरण और आकांक्षाओं ने व्यक्ति को शहर की ओर उन्मुख किया। इस नये परिवेश में ग्रामीण व्यक्ति को नई महानगरीय स्थितियों, विसंगतियों का सामना करना पड़ा। साथ ही ग्रामीण जीवन में भी नयी स्थितियाँ उत्पन्न हुई। परिवेशगत जटिलता और विषमता का जन्म हुआ। गाँव में भी विभिन्न योजनाएँ लागू की गयी, परम्परा सांस्कृतिक छवि में नये स्तर, नये रंग भरने लगे। विज्ञान और टेक्नालॉजी का प्रभाव ग्रामीण संस्कृति पर हावी होने लगा। औद्योगीकरण के साथ-साथ नये विकास मान और परम्परागत मूल्यों में संघर्ष छिड़ गया। संक्रमण की स्थिति उत्पन्न हुई है, नयी स्थिति को जन्म दिया तथा कथाकारों ने नयी ग्रामीण स्थितियों का चित्रण अपनी कहानियों में किया।

ज्ञातव्य हो कि प्रत्येक क्षेत्र अथवा अंचल विशेष की अपनी भिन्न-भिन्न लोक संस्कृति होती है तथा इस लोक

संस्कृति का निर्माण उस क्षेत्र के रीति-रिवाज, पर्व, त्योहार, रहन-सहन, खान-पान, किंवदन्यिां आदि के सम्मिलन से होता है। स्पष्ट है कि यदि किसी क्षेत्र या अंचल के रहन-सहन, रीति-रिवाज, परम्पराएं दूसरे क्षेत्र या अंचल से भिन्न दृष्टिगोचर होते हैं तो लोक संस्कृति में विभेद होना स्वाभाविक है। आंचलिक कथाकारों ने कुछ इसी प्रकार के क्षेत्रों का चयन किया जिसकी भौगोलिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक विशेषताएं असामान्य प्रकार की है। यद्यपि सम्पूर्ण भारत की संस्कृति एक ही है परन्तु भौगोलिक भिन्नता के कारण हर अंचल की लोक संस्कृति में विभिन्नता के कारण हर अंचल की लोक संस्कृति में विभिन्नता के दर्शन होते हैं।

इस विभेद को हम स्थानीय बोली के माध्यम से प्रकट कर सकते हैं। आंचलिक कहानीकारों ने स्थानीय बोली को अनिवार्य आवश्यकता के रूप में उभारा है, क्योंकि लोक भाषा (स्थानीय बोली) का स्पर्श पाकर ही पात्रों की मनःस्थिति, उसकी चरित्रगत विशिष्टता तथा अंचल के सम्पूर्ण परिवेश का यथा तथ्य चित्रांकन कहानीकार कर पाता है। स्थानीय बोली पात्रों के हृदयस्थ भावों, उसके आचार-व्यवहार को चित्रित कर एक विशेष लोक संस्कृति को उजागर करती है। अंचल रूढ़ मान्यताएं और विश्वासों से भरा हुआ है। उनके संस्कार उनकी भाषा से सप्राण रूप से संकेतिक हुए हैं।

चूंकि आंचलिक कहानीकार का मूल उद्देश्य समग्र अंचल को चित्रित करना है इसीलिये उसे भाषा की गहराई में जाना पड़ता है। इसी फलस्वरूप वह आंचलिकता की सफल अभिव्यंजना में सार्थक हो जाता है। भाषा की सूक्ष्मातिसूक्ष्म अभिव्यंजना में लोक कथाएं, लोकगीत, लोकोक्तियाँ बुझौवल, टोना-टोटके, मन्त्रोच्चारण, लोक वार्ता, लोकोत्सव आदि मध्यस्थ की भूमिका का निर्वाह करते हैं। रेणु ने जहाँ बिहार अंचल की परम्पराओं को निकट से अनुभव कर उसका चित्रण किया है, वही शिवप्रसाद सिंह ने उतर प्रदेश के पूर्वी अंचल को अपने कहानी का विषय बनाया। शैलेश मटियानी की कहानियों में कुमायूँ क्षेत्र की लोक परम्पराओं को अभिव्यक्ति मिली है। उन्होंने आदिवासियों की परम्पराओं और रीति-रिवाजों का सफल चित्रांकन किया है। इन कहानीकारों ने लोकोत्सव तथा लोक नृत्य को भी कहानी का हिस्सा बनाया है जिससे अंचल का जीवन्त चित्र उपस्थित हो जाता है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि सभी आंचलिक कहानीकारों कहानियों में लोक जीवन, लोक संस्कृति के विभिन्न रूप देखने को मिलता है। शिवप्रसाद सिंह की कहानियों में पूर्वी अंचल के विभिन्न लोक कथाओं में लोक संस्कृतियों का वर्णन किया गया है तथा शैलेश मटियानी तथा राजेन्द्र अवस्थी की कहानियों में पर्वतीय अंचलों के जीवन तथा लोक संस्कृति का वर्णन मिलता है। आंचलिक कहानियों में निम्न व उपेक्षित जन-समुदाय की संस्कृति में लोक तत्व द्वारा उद्घाटित करने का सफल एवं सशक्त प्रयास किया गया है।

'हिन्दी की आंचलिक कहानियों, शिल्प और भाषा' के अन्तर्गत कहानी के उन उपादानों पर प्रकाश डाला गया है जिनके माध्यम से आंचलिक कहानीकार ने अपनी यथार्थ अनुभूति को रचनात्मक आधार प्रदान कर एक कलात्मक मोड़ दिया है। वास्तव में कहानी का कथ्य शिल्प के माध्यम से ही साकार होता है। कथ्य व शिल्प परस्पर पूरक है। यदि शिल्प गौड़ मानकर कथ्य पर ही विशेष बल दिया जाय तो वहा रचना प्रभावपूर्ण छाप छोड़ने में असमर्थ साबित होगी, इसी प्रकार यदि कहानीकार शिल्प के गठन में आवश्यकता से अधिक तल्लीन हो तथा कथ्य को उसके सहकारी तथ्य के रूप में वर्णित करे तो वह कहानी भी प्रभावशाली नहीं बन पड़ेगी। वस्तुतः इस दशा में शिल्प आरोपित प्रतीत होगा। अतः रचना में कथ्य तथा शिल्प में परस्पर सामंजस्य होना आवश्यक है। जैसे-जैसे कहानी का विकास होता गया उसके शिल्प में भी परिवर्तन होता गया। जहाँ प्रेमचन्द युग की कहानियों में किस्सागोई शिल्प की परम्परा दिखाई पड़ती है, वही आंचलिक चेतना द्वारा नयी कहानी में कहानी की किस्सागोई परम्परा का नवीन संस्कार देखने को मिलता है।

आंचलिक कहानीकारों ने शिल्पविधि के अन्तर्गत विधान को अनुभव मूलक गहराई और परिवेशगत वास्तविकता से समृद्ध किया। ये कहानीकार स्वयं भी किसी न किसी अंचल से सम्बद्ध थे इसीलिए इनकी अनुभूति की तीव्रता और सच्चाई के परिणाम स्वरूप सशक्त शिल्प का निर्माण हुआ। आंचलिक कहानी का शिल्प-गठन लोक रंग द्वारा रूपायित हुआ है। इसी कारण शिल्प के अन्तर्गत कही लोक भाषा का विशिष्ट सौन्दर्य उभरा है तो कहीं लोक चेतना को अभिव्यक्ति करने के लिए विभिन्न रूप-रंग उभरे हैं। इसके लिए आंचलिक कहानीकारों ने नगढ़ गँवई शब्दावली का भी प्रचुरता से प्रयोग किया। साथ ही यथार्थ के भदेस चित्रण को भी शिल्प में सहजता से उकेरा है। शिल्प के गठन में भाषा, बिम्ब, प्रतीक, लोकोक्ति और मुहावरें की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। आंचलिक संवेदना ने कहानी की भाषा को स्थानीय रंग और भाव से समृद्ध किया है। आंचलिक बिम्बों और प्रतीकों के माध्यम से आंचलिक जीवन के हल्के-गहरे रंग इन कहानियों में उभारे हैं। जीवन जैसा है उसे नयी कहानी की भाषा और संवेदना में साकार करने का श्रेय आंचलिक भाषा को जाता है।

आंचलिकता ने आंचलिक भाषा अभ्यान्तर योग बाह्य यथार्थ बोध को प्रभावित तथा विकसित ही नहीं किया वरन् अंचल विशेष से सम्बद्ध व्यापक शब्द भण्डार भी दिया। उसने भाषा की आन्तरिक शक्ति को ऊर्जस्वित किया तथा ऊर्ध के स्तर पर छिपी हुई अनंत संभावनाओं को संयत और भाविक उद्घाटित करने का कार्य भी किया। आंचलिक भाषा ने कहानी की भाषा की रूढ़ परम्पराओं को खण्डित करते हुए उसमें आंचलिक संवेदना के हल्के गहरे रंग भर कर अर्ध गर्भित-संकेतिक शैली को प्रौढ़ता प्रदान की है। आंचलिक कहानी की भाषा में पात्र परिवेश और मनःस्थिति के अनुरूप उपभाषा का प्रयोग, विशेष रूप से आंचलिक कथ्य के संदर्भ में उभरे हैं। आंचलिक कहानी की भाषा में बहुत से अंग्रेजी शब्द विकृत होकर ग्रामीण भाषा में घुल-मिल गये हैं, यही नहीं संस्कृत में तत्सम शब्दों के बिगड़े रूप दृष्टिगत हो जाते हैं।

कहानी के शिल्प-विधान की दृष्टि से बिम्बों का महत्वपूर्ण स्थान है। आंचलिक कहानियों में बिम्बों द्वारा सजीव वातावरण की सृष्टि हुई। बिम्ब-विधान द्वारा भाषा सजीवता और चित्रात्मकता से परिपूर्ण रूप ग्रहण करती है। आंचलिक कहानियों में अचंल का परिवेश कथ्य का आधार बना परिवेश को उजागर करने में बिम्ब सबसे सशक्त कलात्मक अभिव्यक्ति है, आंचलिक कथाकारों ने भी बिम्बों के माध्यम से वातावरण का सृजन किया है। आंचलिक कहानी में बिम्बों के साथ प्रतीकों के द्वारा कहानी कथ्य सूक्ष्म सांकेतिक अर्थव्यंजित करने में प्रभावशाली हुई है। प्रतीक विधान से शिल्प सौन्दर्य में वृद्धि होता है, क्योंकि प्रतीक हमारी बिखरी हुई अनुभूतियों को एक केन्द्रीय दिशा देते हैं प्रतीकात्मकता के कारण कहानीकार आन्तरिक यथार्थ को मूर्तरूप में उपस्थित करता है, जिससे कहानी की सार्थकता बढ़ जाती है।

अतः कहा जा सकता है कि आंचलिक कहानी ने नयी कहानी के शिल्प विधान को बाह्य और अन्तः स्तर पर प्रभावित किया है।

आंचलिकता के स्वरूप और प्रक्रिया के संदर्भ में सन् 50 से लेकर 90 तक की कहानियों को दृष्टिपथ में रखा गया है। मुख्यतः प्रतिनिधि रचनाकारों और उनकी बहुचर्चित रचनाओं को ही विश्लेषण और विवेचन के लिए ग्रहण किया गया है। आंचलिक कहानी के भविष्य को लेकर सहसा एक जिज्ञासा उठती है। यह सच है कि आंचलिकता एक कहानी आंदोलन नहीं रहा, फिरहाल आंचलिक कहानियों में महत्वपूर्ण रचनात्मक हलचल दृष्टिगोचर नहीं होता किन्तु आंचलिकता का संदर्भ कभी भी बासी और फीका पड़ने वाला नहीं। हमारे देश की सांस्कृतिक विविधता विस्तृत क्षेत्रफल में स्थित भिन्न-भिन्न अंचलों का बहुरंगी जीवन कहानीकारों को सदा आकर्षित करता रहेगा। अब भी लोक जीवन गहरायी में अनेक अनकही कथाएं किसी समर्थ रचनाकार की प्रतीक्षा में सुप्त पड़ी है। देखा जाय तो कहानी की साहित्यिक पत्रिकाओं में यदा-कदा अब भी आंचलिक कहानी पढ़ने को मिल जाती है।

ज्यों-ज्यों सामाजिक परिवर्तनों की लहर दूरवर्ती, अंचलों तक पहुँचेगी वहाँ के स्थिर जीवन में मानवीय सम्बन्धों, मूल्यों, मान्यताओं और आदर्शों में संघर्ष और संक्रमण के धरातल उद्घाटित होंगे। फलस्वरूप अंचलों के जीवन सत्य को कथ्य बनाकर लेखन की अपार सम्भावनाएं अब भी शेष है।

संदर्भ:

1. डा0 शिवप्रसाद सिंह, मेरी प्रिय कहानियाँ, की भूमिका।
2. डॉ0 बच्चन सिंह, समकालीन हिन्दी साहित्य: आलोचना की चुनौती
3. सत्य नारायण तिवारी: युग धर्म, नागपुर, 27 मई, 1962
4. शिव सहायक पाठक नवनीत, अगस्त, 1962
5. डॉ0 विवेकी राय: स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कथा साहित्य और ग्राम्य जीवन
6. सारिका, 1 फरवरी, 1980